भारत में मानव अधिकार एवं महिलाओं की स्थिति

रेणु शर्मा शोधार्थी एवं डॉ. विजय कुमार सोनी, निर्देशक
अर्थशास्त्र विभाग, श्री जेजेटी विश्वविद्यालय, झुंझुनूं, राजस्थान

मुख्य शब्द – महिला, अधिकार, कानून, मानवाधिकार, विधिक अधिकार, सशक्तीकरण, प्रभाव, वर्तमान स्थिति।

सारांश

महिलाओं के विकास और सशक्तीकरण के उपाय और प्रयास भारत में होते रहते है और हो रहे है। इन्हीं प्रयासों में मानवाधिकारों के संदर्भ में भी महिलाओं की स्थिति उन्नत करने के उद्देश्य से कई कानून और अधिनियमों का निर्माण हुआ है। वैश्विक स्तर पर मानवाधिकारों में भी महिलाओं के संदर्भ में विशेषरूप से कई अधिकारों का उल्लेख किया गया तथा समस्त देशों को इस दिशा में कार्य करने के लिए निर्देश भी दिए गए।

भारत में महिलाओं की स्थिति उच्च थी तो कालांतर में राजनीतिक और सामाजिक कारणों से गिरती गई और आज तक उनकी स्थिति सम्मानजनक तथा संतुष्टिपूर्ण स्तर तक नहीं पहुंच पायी है। इस लेख में यह जानने का प्रयास किया गया है कि भारत में महिलाओं की स्थिति किस प्रकार परिवर्तित हुई तथा मानवाधिकारों के संदर्भ में महिला उत्थान के लिए क्या प्रयास किए गए और उनका क्या परिणाम रहा। साथ ही इस लेख में भारत में महिलाओं की वर्तमान स्थिति के कारणों की समीक्षा प्रस्तुत की गई है।

प्रस्तावना

प्राचीन काल से मनुष्य स्वच्छंद रूप से विचरण करता तथा अपनी वृत्तियों हेतु प्रेरित होकर ही कार्य करता था। इच्छापूर्ति या उदरपूर्ति हेतु किया गया उसका प्रयत्न ही अधिकार था। कालांतर में विकास के क्रम में उसे रोटी, कपडा, व मकान की आवष्यकता महसूस हुई जिससे वह समाज के बंधनों में बंध गया और निरंकुष सत्ता के अधीन हो गया। इन्ही निरंकुषताओं के विरूद्ध मानवीय संघर्ष ने मानवाधिकार के रक्षा की नींव रखी। अतीत में सभी समाजों और संस्कृतियों ने कुछ ऐसे अधिकारों और सिद्धान्तो की अवधारणा का विकास किया है, जिनकी रक्षा की अपेक्षा रखने का हक प्रत्येक मनुष्य को है। आधुनिक काल में यह माना जाने लगा है कि अन्तर्राष्ट्रीय शांति और सुख –समृद्धि मानव अधिकारों की उपलब्धि और उपभोग पर आधारित है। मानवाधिकार की अवधारणा सत्ता के स्वेच्छाचारी इस्तेमाल के रोकने के उपाय के रूप में विकसित हुई।

मानव अधिकार का अर्थ उन अधिकारों से लगाया जाता है जो मानव जाति के विकास के लिए मूलभूत हैं। ये अधिकार मनुष्य को जन्म से ही प्राप्त होते हैं और इनकी प्राप्ति में जाति, लिंग, धर्म, भाषा, रंग तथा राष्ट्रीयता बाधक नहीं होती। मानव अधिकार को मूलाधिकार, आधारभूत अधिकार अथवा नैसर्गिक अधिकार भी कहा जाता है। ये अधिकार मानव को केवल इस आधार पर मिलने चाहिऍ कि वह मानव है। सभी मानव अधिकार सार्वभौमिक, अविभाज्य और परस्पर निर्भर व परस्पर संबंधित है। सभी मनुष्य जन्म से समान है एवं इन्हें ईष्वर ने कुछ ऐसे अधिकार प्रदान किये हैं, जिन्हें छीना नहीं जा सकता हैं। विष्व के नागरिकों के लिए ये मानव अधिकार उनके अपने जीवन जीने के लिए आवष्यक है। मानवाधिकार जीवन की वह व्यवस्था हैं जिन्हें सामाजिक एवं राजनीतिक मान्यता मिली होती है और जिनका प्रयोग करके व्यक्ति अपने जीवन में श्रेष्ठता को प्राप्त करता है।

मानव अधिकारों का इतिहासः–

इतिहास तथा प्राचीन धर्मग्रन्थों में मूल मानव अधिकारों का वर्णन किया गया है। आधुनिक इतिहासकार मानवाधिकार के विकास का श्रेय मैग्नाकार्टा को देते हैं। अंग्रेज सामंतो ने 15 जून 1215 को इंग्लैण्ड के राजा जॉन को एक चार्टर पर हस्ताक्षर करने के लिए विवष किया। मैग्नाकार्टा के द्वारा ही जनता को कुछ अधिकार हस्तान्तरित हुए।यह मानवाधिकारों के लिए संघर्ष के इतिहास में सम्भवतः पहली सबसे बडी एवं महत्तवपूर्ण घटना है। 1628 व 1689 के अधिकार पत्रो में सम्राट के हस्ताक्षर संसद ने करवाये और ये अधिकार ही बाद में मानव अधिकार के रूप में विकसित हुए। सन् 1679 में बंदी प्रत्यक्षीकरण अधिनियम पारित हुआ, जिसके द्वारा प्रत्येक व्यक्ति की वैयक्तिक स्वतन्त्रता स्वीकार की गई। सन् 1776 में संयुक्त राज्य अमेरिका के स्वतन्त्रता सम्बन्धी घोषणापत्र में अहरणीय मानवाधिकारों को शामिल किया गया। इनमें जीवन, स्वतन्त्रता और खुषी की तलाष के अधिकार शामिल थे।

सन् 1789 में में फ्रांसीसी क्रांति के दौरान मनुष्य तथा नागरिकों के अधिकारों से सम्बन्धित घोषणापत्र तैयार किया गया। सन् 1833 में सभी ब्रिटिष क्षेत्र में दास प्रथा की समाप्ति के लिए ब्रिटिष संसद ने एक विधेयक पारित किया और दास व्यापार की समाप्ति के लिए अन्तर्राष्ट्रीय समझौते हुए। सन् 1917 के रूस क्रांति के पष्चात् ही सर्वहाराओं द्वारा मौलिक अधिकार प्राप्त किए गये। सन् 1929 में अन्तर्राष्ट्रीय विधि संस्थान, न्यूयार्क, संयुक्त राज्य अमेरिका ने मानव अधिकारों तथा कर्त्तव्यों का एक घोषणापत्र तैयार किया। तत्पष्चात् सन् 1945 में इंटर अमेरिकी कांग्रेस ने मानव जाति के अधिकार की संकल्पना को बढ़ावा देने के लिए अन्तर्राष्ट्रीय फोरम तैयार करने का प्रयत्न किया।

1946 में विधिवत् मानवाधिकार आयोग बना एवं मानवाधिकार घोषणापत्र का प्रारूप तैयार किया गया तथा संयुक्त राष्ट्र महासभा को सौंपा गया। प्रारूप में कुछ संषोधनो के बाद महासभा ने 10 दिसम्बर 1948 के मानवाधिकारों के विष्व घोषणापत्र की घोषणा की। प्रारम्भ में मानवाधिकार प्राकृतिक नियम के रूप में विद्यमान थे, परन्तु 10 दिसम्बर 1948 के बाद इसे व्यावहारिक रूप प्राप्त हुआ। संयुक्त राष्ट्र मानव अधिकार घोषणा पत्र मानव सभ्यता के इतिहास में पहला दस्तावेज है जिसमें अधिकारों की न सिर्फ विस्तृत व्याख्या की गई है, अपितु इसे नई विष्व व्यवस्था के आदर्ष व अन्तर्राष्ट्रीय मान्यता प्राप्त मूल्य रूप में स्थापित भी किया गया। मानव अधिकारों की सार्वभौम घोषणा में तीस धाराएँ हैं जिनमे नागरिक और राजनीतिक अधिकारों के साथ ही आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक अधिकार भी सम्मिलित है। इस घोषणा में यह स्वीकार किया गया हैं कि मनुष्य स्वतन्त्र जन्म लेते हैं तथा गरिमा, सम्मान और विचारों में समान होते हैं। मनुष्य को समाज एवं राष्ट्र का सदस्य होने के नाते मानवाधिकार उसे अन्तर्राष्ट्रीय न्याय व्यवस्था द्वारा मान्य होते हैं। इन अधिकारों का राष्ट्रीय स्तर में हनन होने पर अन्तर्राष्ट्रीय न्यायिक संस्थाओं में अपील करने का भी प्रावधान दिया गया है।

मानवाधिकार घोषणा पत्र में विभिन्न नागरिक और राजनीतिक अधिकारों का समावेष है, जिनमें प्रमुख है : – जीवन स्वतन्त्रता और सुरक्षा का अधिकार, अत्याचार और उत्पीडन से रक्षा का अधिकार, कानून के समक्ष समता का अधिकार, मनमाने रूप से बंदी बनाए जाने और देष निकाले से रक्षा का अधिकार सार्वजनिक एवं महत्तवपूर्ण मुकदमों सम्बन्धी अधिकार, प्रमाणित न होने तक निर्दोष समझे जाने का अधिकार , राज्य के बाहर आने–जाने का अधिकार, विवेक और धर्म की स्वतन्त्रता का अधिकार , राष्ट्रीयता का अधिकार, परिवार की सुरक्षा का अधिकार, पति–पत्नी का अधिकार, सहमति के आधार पर विवाह करने का अधिकार, सम्पत्ति पर अधिकार, शांतिपूर्वक ढंग से एकत्र होने और संघ बनाने का अधिकार, इच्छानुसार सरकार बनाने का अधिकार, सार्वजनिक कार्यो और राजनीति में भाग लेने का अधिकार , सरकारी नौकरी करने का अधिकार, आदि–आदि।

इसके अलावा समय–समय पर मानव के चतुर्मुखी विकास के लिए मानवाधिकारों सम्बन्धी अनेक घोषणाएँ की गई, जिसमें : – दिसम्बर 1948 को जाति संहार के विरूद्ध कार्यवाही का अधिकार, नवम्बर 1959 को बच्चों के अधिकार, नवम्बर 1963 को नस्लीय भेदभाव के विरूद्ध कार्यवाही का अधिकार, नवमबर 1966 को संस्कृति के अधिकार, दिसम्बर 1966 को आर्थिक, सामाजिक, और सांस्कृतिक अधिकार तथा नागरिक और राजनीतिक अधिकार,, नवम्बर 1967 को महिलाओं से भेदभाव के विरूद्ध कार्यवाही का अधिकार, फरवरी 1991 को अल्प संख्यकों के अधिकार आदि प्रमुख हैं।

संयुक्त राष्ट्र संघ व महिला अधिकार :–

अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर 1945 से प्रारम्भ मानवाधिकार एवं महिला आन्दोलनों ने लिंग भेदभाव एवं असमानता के प्रष्नों को अन्तर्राष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय मंचो पर राजनैतिक मुद्दों के रूप मे प्रस्थापित किया। संयुक्त राष्ट्र संघ ने शांति स्थापना एवं विकास यात्रा में महिलाओं की भूमिका के महत्त्व को भी रेखांकित किया है। संघ ने अनेक अन्तर्राष्ट्रीय संघठन बनाए, जिसमे महिलाओं को पुरूष के समान उत्थान का अधिकार दिया।इस प्रक्रिया में संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार घोषणा से पूर्व 1946 में महिला प्रस्थिति के अध्ययन के लिए गठित समिति की घोषणा महत्तवपूर्ण रही जिसको ''कमीषन ऑन द स्टेटस ऑफ वूमेन '' का नाम दिया गया।

1967 में संयुक्त राष्ट्र संघ महासभा द्वारा महिलाओं के प्रति भेदभाव समाप्त करने सम्बन्धी प्रस्ताव पारित किया गया। इस के अन्तर्गत यह प्रावधान किया गया है कि महिलाओं को चाहे वे विवाहित हो या अविवाहित, पुरूषों के साथ आर्थिक एवं सामाजिक क्षेत्र में सभी समान अधिकार प्रदत्त किये जाने के लिए समुचित व्यवस्था की जाएगी और किसी भी प्रकार का भेदभाव नहीं होगा। महिलाओं के उत्थान के संदर्भ में सम्पूर्ण विष्व में महिला उत्थान व विकास के प्रति चेतना जगानें के लिए संयुक्त राष्ट्र की महासभा में 1975 को '' अन्तर्राष्ट्रीय महिला वर्ष'' घोषित करने का निर्णय लिया। संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा महिला सहयोग की अपेक्षा करते हुए अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर महिला योगदान व महिला सकारात्मक व रचनात्मक भूमिका के महत्तव को स्वीकार करते हुए महिला जगत् के उत्थान के कार्यक्रम बनाये।

1975 में प्रथम अन्तर्राष्ट्रीय महिला सम्मेलन में संयुक्त राष्ट्र संघ ने महिला कल्याण हेतु 1975 से 1984 दषक को महिला दषक घोषित किया जिसमें महिला षिक्षा, रोजगार, लिंग भेदभाव मिटाने, नीति निर्धारण में महिलाओं को सम्मिलित करने एवं समान राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक, नागरिक अधिकार देने आदि की घोषणाएँ की गई। 1978 में महिलाओं के प्रति सभी प्रकार के भेदभाव समाप्त करने के लिए समिति के गठन का प्रस्ताव किया गया एवं हिंसा को समाप्त करने के आषय से नवीन घोषणा जारी की गई।

दिसम्बर 1993 को संयुक्त राष्ट्र की सामान्य सभा के भीतर महिलाओं के प्रति हिंसा निष्कासन की घोषणा को स्वीकार किया गया एवं महिलाओं के प्रति हिंसा को सात भागों में बॉटा गया:–

1. समुदाय तथा परिवार के भीतर शारीरिक जैविक तथा मनोवैज्ञानिक हिंसा जिसमें पत्नी को पीटना, लडकी का अनैतिक शोषण, दहेज सम्बन्धी हिंसा, वैवाहिक बलात्कार, महिला जनन अंगो की कॉट–छॉट तथा अन्य महिलाओं के प्रति घातक पारम्परिक क्रियाएँ।
2. अवैवाहिक हिंसा।
3. असन्तोष आधारित हिंसा।
4. शैक्षणिक संस्थाओं एवं अन्य स्थानों में कार्यस्थल पर धमकी तथा यौनिक उत्पीडन।

5. महिला को बेचना तथा व्यापारीकृत करना।
6. वैष्यावृत्ति हेतु दबाव डालना।
7. राज्य द्वारा क्षमादान तथा अपराधी हिंसा।

परम्परागत भारतीय समाज में महिलाओं की प्रस्थिति एवं वर्तमान परिदृष्य :–

समूचे विष्व इतिहास के असंख्य पृष्ठ महिलाओं के प्रति हृदयहीन अत्याचारों और अधिकार वर्जना से भरे हैं। सभी महिलाओं को एक समूह मे देखे तो संसार के लगभग सभी देषों मे वे समाज का कमजोर हिस्सा रही हैं। मानव जाति का समूचा इतिहास इसकी गवाही देता है।

प्राचीन काल से ही महिलाओं को पुरूषों की बराबरी का दर्जा देना अस्वीकार किया जाता रहा है।

ऋग्वैदिक काल में महिलाओं को बराबरी का दर्जा दिया जाता रहा है। पुत्र और पुत्री दोनों के लिए उपनयन संस्कार अनिवार्य था। षिक्षा के क्षेत्र में भी इन्हें पुरूषों के समान अधिकार प्राप्त थे। इस युग में बालविवाह का प्रचलन नहीं था एवं महिलाओं को अपनी इच्छानुसार जीवनसाथी चुनने का अधिकार था। पर्दा प्रथा का प्रचलन नहीं था तथा महिलाओं के अपमान को पाप समझा जाता था। इस युग में महिलाओं की प्रस्थिति सभी क्षेत्रों में सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक, राजनैतिक में समानता पर आधारित थी। वेदों की रचना में लगभग 200 श्लोकों का योगदान महिलाओं का माना गया है।

उत्तर वैदिक काल में भी महिलाओं की प्रस्थिति अच्छी थी परन्तु इस काल में महिलाओं के लिए धार्मिक कार्यो में लेना सम्भव नहीं रहा, इनके वेद के अध्ययन में भी रोक लगा दी गयी। इस युग में बालविवाह एवं बहुपत्नी विवाह का प्रचलन बढा, विधवा विवाह पर भी प्रतिबन्ध लगे एवं अन्य स्वतन्त्रता पर भी बंधन लगा दिये गये।

धर्मषास्त्र काल सामाजिक और धार्मिक संकीर्णता का युग था। इस युग में महिलाओं की स्थिति में काफी गिरावट आई। इस काल में महिलाएँ गृहलक्ष्मी से याचिका के रूप में दिखाई देने लगी एवं अत्यन्त निर्बल, असहाय तथा पराधीन हो गई। महिलाओं के लिए एकमात्र विवाह संस्कार ही रह गया है और उनके सम्पत्ति के अधिकार भी छीन लिये गये। बाल विवाह का प्रचलन बढ़ा, जीवनसाथी चुनने का अधिकार छीना गया एवं पुरूष बहुपत्नी विवाह करने लगे। इस युग में महिलाओं की प्रस्थिति बहुत ही निम्न स्थिति में पहुँच गई थी।

मध्यकाल में हिन्दु धर्म व संस्कृति की रक्षा के नाम पर महिलाओं पर कई तरह के प्रतिबंध लगा दिए गये जिससे उनकी स्थिति में और गिरावट आई। सामाजिक संरचना में जटिलता, कठोरता, संकीर्णता, अपारदर्षी व्यवस्थाओं का उद्भव हुआ एवं महिलाओं की स्वतन्त्रता का शनैःषनैः हनन् प्रारम्भ हुआ। महिलाओं की भूमिका को प्रजनन एवं पारिवारिकता तक सीमित किया जाने लगा। इस युग में पर्दाप्रथा, बालविवाह, धर्म परिवर्तन, विधवा उत्पीडन, सती प्रथा, दहेज आदि कुरीतियों का प्रचलन बढा। इन सभी के लिए यदि जिम्मेदार पुरूष थे तो स्वयं महिलाएँ भी थी जो प्रतिद्वन्द्वी बनकर दूसरी महिला के दोहन और शोषण का कारण बनी। इस प्रकार मध्यकाल महिलाओं के पतन का युग था एवं उनकी निम्न दषा की चरम सीमा थी।

ब्रिटिष शासन काल में भारतीय सामाजिक संरचना में बाहरी प्रभावों का सूत्रपात एवं दखल प्रारम्भ हुआ, जिससे महिला प्रस्थिति के प्रष्नों को भी प्रभावित किया। इस काल में महिलाओं की दषा में कुछ सुधार हुआ और उन्हें आर्थिक क्षेत्र में समान अधिकार दिये गये, विधवा–पुनर्विवाह कानून एवं विवाह विच्छेद हेतु कानून लागू किये गये। बाल विवाह और सती प्रथा को रोकने हेतु कानून बनाये गये। पर्दाप्रथा भी समाप्त होने लगी। महिलाओं का उनके अधिकार दिलाने के अनेक महापुरूषों को संघर्ष करना पडा। राजा राम मोहन राय, स्वामी दयानन्द सरस्वती, ईष्वरचन्द्र विद्यासागर एवं महात्मा गॉधी आदि ने पूरी शक्ति से महिलाओं की समानता का प्रचार किया, जिससे महिलाओं को बहुत सी सामाजिक और परम्परागत दासताओं और बन्धनों से छुटकारा मिला।

स्वतन्त्रता के पश्चात् महिलाओं की स्थिति में काफी सुधार हुआ है। पष्चिमीकरण, लौकिकीकरण तथा जातीय गतिषीलता ने महिलाओं की सामाजिक, आर्थिक स्थिति को उन्नत करने में काफी योगदान दिया है। परिणामस्वरूप अधिकाधिक परम्परागत निर्योग्यताएँ धीरे– धीरे समाप्ति की ओर अग्रसर होती चली गई और महिलाओं को विवाह, सम्पत्ति, संरक्षता और विवाह विच्छेद के क्षेत्र में पुरूषों के समान अधिकार प्राप्त होने तथा सामाजिक रूढियों से छुटकारा पाने का अवसर मिला।

वर्तमान परिदृष्यः–

महिलाओं के प्रति शोषण, अत्याचार तथा उत्पीडन वर्तमान परिप्रेक्ष्य में एक सार्वभौमिक तथ्य है

आज सार्वभौमिक मानवाधिकार घोषणापत्र को लगभग 60 वर्ष पूरे होने को हैं, फिर भी मानवाधिकारों का उल्लंघन समाज में प्रतिदिन दिखाई देता है, विषेष तौर पर महिलाओं के प्रति। महिलाओं को सदा से ही सामाजिक, धार्मिक, विधिक, शैक्षणिक, आर्थिक व सांस्कृतिक क्षेत्र में उपेक्षा सहनी पडी एवं उन्हें समाज में सदैव दोयम दर्जा ही प्राप्त हुआ । शारीरिक रूप से कमजोर और आर्थिक रूप से पुरूषों पर निर्भर होने के कारण सदियों से महिलाओं के साथ दुर्व्यवहार, शोषण और यौन उत्पीडन होता रहा है ओर यही कारण है कि उन्हें अपने मानवाधिकारों के लिए अधिक संघर्ष करना पडता है।

संवैधानिक प्रावधानों और कानूनो के बावजूद महिलाओं के उत्पीडन की घटनाओं की संख्या दिन प्रतिदिन बढ रही है। वह अपने आप को पहले से भी कही ज्यादा असुरक्षित महसूस करती है। महिलाओं में षिक्षा प्राप्ति के अधिकार भी पुरूषों की अपेक्षा न्यून हैं। हालांकि शहरों में तो स्थिति ष्सुधर रही है परन्तु गॉवो में अभी भी महिला षिक्षा मे भेदभाव किया जाता है। महिलाओं के प्रति षिष्टता का हनन आधुनिक समाज में खुलेआम हो रहा है, फिल्मों और विज्ञापनों मे महिलाओं की देह को उपभोग की सामग्री की तरह बेचा जा रहा है।

आज वर्तमान में घर के बाहर एवं अन्दर महिलाओं को शोषण तथा दमन का सामना करना पडता है। घर की चारदीवारी के अन्दर दमन अधिकतर गुप्त होता है तथा परिवार के अंदर महिलाओं की समस्याएॅ बढ जाती हैं। महिलाओं एवं पुरूषों के बीच असमान शक्ति सम्बन्धों की अभिव्यक्ति जीवन के अनेक क्षेत्रों में प्रतिबिम्बित होती है और महिलाओं को हिंसा, भ्रूण हत्या, षिषु हत्या, दहेज प्रताडना, मारपीट, यौन शौषण, शारीरिक एवं भावनात्मक दुर्व्यवहार आदि का सामना करना पडता है।

यूनीसेफ के एक अनुमान के अनुसार भारत में प्रतिवर्ष 50 लाख भ्रूण हत्याएॅ होती हैं जिनमे अधिकतर मादा भ्रूण हत्या हैं। महिलाओं की आर्थिक गतिविधि कुल आर्थिक गतिविधि का लगभग 50 प्रतिषत है, किन्तु आमदनी में उनका हिस्सा 34 प्रतिषत से अधिक नहीं है। असमानता के आंकडे हर क्षेत्र में देखे जा सकते है। महिलाओं पर बढती हिंसा और भी अधिक शोचनीय है। षिक्षा के अवसर निरन्तर बढे हैं किन्तु बहुसंख्यक बालिकाओं को लाभ नहीं मिल पाया है। विडम्बना है कि विकास की गति के बावजूद महिलाओं की प्रस्थिति में आषानुकूल सुधार नहीं हुआ है, बल्कि कुछ क्षेत्रों में तो स्थिति बदतर हुई है। महिलाएॅ जो विष्व की आबादी का आधा हिस्सा हैं और जिनका समाज निर्माण में योगदान पुरूषों से किसी भी प्रकार कम नहीं है, पुरूष प्रधान समाज में कभी भी अपना न्यायोचित स्थान प्राप्त नहीं कर पाई।

भारतीय महिलाओं के संवैधानिक व विधिक अधिकारः–

भारत में मानवाधिकारों को संविधान के तीसरे और चौथे अनुच्छेद में संवैधानिक स्थिति प्राप्त है। संविधान में महिलाओं के साथ होने वाले अन्यायों और विषेषताओं को समाप्त करने का लक्ष्य रखा गया है। महिलाओं के अधिकारों को संरक्षण प्रदान करने के लिए राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर असंख्य प्रावधान कर रखे हैं। संविधान में महिलाओं को पुरूषों के समान ही अधिकार दिए हैं, अत्याचारों से दबी उनकी दयनीय जीवन स्थितियों को रूपांतरित करने और सामाजिक, आर्थिक तथा विधिक पहचान बनाने के लिए कई कल्याणकारी मान्यताएॅ दी हैं लेकिन उनकी विकास की स्थिति और दषा आज भी चिंतनीय है। अतः महिलाओं की अभाव, अत्याचार, घुटन, कुरीतियों तथा पषुओं से भी बदतर जीवन– स्थितियों को आजादी प्राप्ति के बाद बदलनें का सिलसिला प्रारम्भ अवष्य हुआ है।

भारतीय संविधान में महिलाओं को पुरूषों के समान सुरक्षा प्रदान की गई है एवं सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक न्याय देने का आष्वासन दिया गया है। भारतीय संविधान की प्रस्तावना में ही सामाजिक न्याय, समान अवसर तथा समान श्रेणी देने की बात कही गई है।

संविधान के विभिन्न अनुच्छेदों में महिला अधिकारों को अप्राविधिक किया गया है, उनमें से मुख्य प्राविद्यित अधिकार इस प्रकार हैः–अनुच्छेद 14 में कानून के समक्ष बराबरी का प्रावधान है, अनुच्छेद 15 में लिंग जाति धर्म व जन्म स्थान आदि किसी भी आधार पर भेदभाव पर रोक, अनुच्छेद 16 में लोकसेवाओं मे बिना भेदभाव अवसर की समानता, अनुच्छेद 19 में समान रूप से अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता, अनुच्छेद 21 में जीवन एवं व्यक्तिगत स्वतन्त्रता की सुरक्षा, अनुच्छेद 23–24 में शोषण के विरूद्ध अधिकार, अनुच्छेद 25 में विचार, अंतःकरण एवं धर्म की समानता, अनुच्छेद 29 में आर्थिक– सामाजिक, सांस्कृतिक अधिकार अनुच्छेद 30 में षिक्षा सम्बन्धित अधिकार, अनुच्छेद 31 में सम्पत्ति रखने का अधिकार, अनुच्छेद 39 में काम का अधिकार, समान कार्य, समान वेतन संघ बनाने का अधिकार, अनुच्छेद 40 में पंचायती राज संस्थाओ मे 73 वे 74 वे संविधान संषोधन के माध्यम से आरक्षण, अनुच्छेद 41–42–43 में नीति निर्देषक तत्व के तहत नारी को विषेष सामाजिक सुरक्षा, अनुच्छेद 41 में नारी को काम का अधिकार, षिक्षा अधिकार, बेरोजगारी व अपाहिज होने पर सुरक्षा, अनुच्छेद 42 में महिलाओं को प्रसूति सहायता की व्यवस्था, अनुच्छेद 43 में कामकाजी के जीने के लिए अच्छा वेतन तथा जीवन जीने की व्यवस्था , अनुच्छेद 44 में सरकार द्वारा सभी को समान रूप से नागरिक अधिकार, अनुच्छेद 47 मे पोषाहार जीवन स्तर व लोक स्वास्थ्य मे सुधार करना सरकार का दायित्व, अनुच्छेद 330 में प्रस्तावित 84वे संविधान संषोधन के जरिये लोकसभा एवं अनुच्छेद 332 में प्रस्तावित 84वे संविधान संषोधन के जरिये राज्यों की विधानसभाओं में महिलाओं के लिए आरक्षण की व्यवस्था की गई है।

उपर्युक्त संवैधानिक प्रावधानों के अतिरिक्त संविधान प्रदत्त विधियों द्वारा भी महिला अधिकारों को संरक्षण प्रदान किया गया हैं। बागान श्रम अधिनियम 1951, खान अधिनियम 1952, कर्मचारी राज्य बीमा विनियमन अधिनियम 1952, विषेष विवाह अधिनियम 1954, हिन्दु विवाह अधिनियम 1955, हिन्दु उत्तराधिकारी अधिनियम 1956, स्त्री और बालक संस्था (अनुज्ञापन) अधिनियम, 1956 अनैतिक व्यापार निवारण अधिनियम 1956, हिन्दु नाबालिग संरक्षकता अधिनियम 1956, प्रसूति प्रसुविधा अधिनियम 1961, दहेज निषेध अधिनियम 1961 (संसोधन 1986), बीडी एवं सिगार कर्मकार अधिनियम 1966, ठेका श्रम अधिनियम 1970, आपराधिक विधि, संसोधन अधिनियम 1983, कुटुम्ब न्यायालय अधिनियम 1984, मुस्लिम स्त्री (विवाह विच्छेद पर अधिकार संरक्षण) अधिनियम 1986, स्त्री अषिष्ट निरूपण निषेध अधिनियम 1986, सती निषेध अधिनियम 1987, प्रसव पूर्व निदान तकनीकी अधिनियम 1994 आदि।

निष्चय ही उपर्युक्त अधिनियमों के क्रियान्वयन से महिलाओं की वैधानिक स्थिति अपेक्षाकृत मजबूत हुई हैं। यद्यपि कानून ने महिलाओं को अनेक प्रकार की सुरक्षात्मक व्यवस्थाएँ दी हैं, किन्तु सही परिपेक्ष्य में प्रभावी कार्यान्वयन के वांछित परिणाम समाज में दिखाई नहीं पड़ते हैं। वस्तुतः भारतीय संविधान में कानून के शासन की बुनियादी प्रतिबद्धता महिला पुरूष समानता अर्न्तनिहित हैं जो महिलाओं के लोकतान्त्रितक अधिकारों को संरक्षित करती हैं । इससे महिला अधिकारों की स्थिति में गुणात्मक परिवर्तन की शुरूआत देखी जा सकती हैं जो अवष्य ही महत्त्वपूर्ण हैं। संवैधानिक एवं वैधानिक लैगिंग समानता ने महिलाओं के लिए सुदृढ आधार प्रदान किया हैं और निष्चय ही ये स्वागत योग्य प्रयास है, किन्तु महिलाओं के बडे तबके के लिए आज भी इनकी क्रियान्विति यथार्थ से दूर है ये प्रयास महिलाओं के अधिकार पूर्ण सषक्तिकरण में कितने सफल हो पाएँगे इसका जवाब भविष्य की गर्भ में है।

मूल्यांकनः–

बीसवीं शताब्दी मानवाधिकारों के क्षेत्र में सोच–विचार को नवीन आयाम प्रदान करने के लिए इतिहास में एक विषिष्ट स्थान रखती है। यद्यपि यह एक कटु सत्य है कि आज भी विष्व के अनेक देषों के नागरिकों को पूर्ण मानव अधिकार प्राप्त नहीं हो सके हैं। महिला जनसंख्या के अधिकांष भाग के लिए भारत में ही नहीं वरन् सम्पूर्ण विष्व में मानवाधिकार आज भी मिथक है। आजादी के साठ वर्षो की विकास यात्रा में देष में महिलाओं उनकी षिक्षा, स्वास्थ्य, आर्थिक स्थिति और सामाजिक मान्यताओं के प्रति दृष्टिकोण में परिवर्तन की सुगबुगाहट अवष्य लक्षित हैं लेकिन इस विषाल और अनगिनत विविधताओं वाले देष में इस परिवर्तन का अंष नगण्य ही है। लेकिन यह एकदम सत्य और प्रामाणिक तथ्य है कि देष में महिलाओं पर अत्याचारों की विविधता तथा गंभीरता भी बढी है। महिलाओं से सम्बन्धित अपराधों के नये–नये विकृत रूप सामनें आए है जो यह प्रमाणित करता है कि षिक्षा, संविधान, सामाजिक मर्यादा और नारी महत्त्व के सारे प्रगतिषील कार्यो के बावजूद उन पर हो रहे अत्याचारों में वृद्धि होती जा रही है। महिलाओं की स्थिति को सुधारने एवं उसके विकास हेतु उन्हें समाज व संविधान ने कई अधिकार तो दे दिए हैं, ताकि वह अपने हक को पा सके किन्तु क्या इन अधिकारों के बनने से ही उनकी स्थिति सुधर जायेगी, क्योंकि जो अधिकार उन्हें मिलने चाहिए थे, आज भी वे उन अधिकारों से वंचित है। उनके जीवन में तभी प्रसन्नता आयेगी जब उन्हें समाज मे समानता का अधिकार प्राप्त होगा, इससे एक कुषल समाज का निर्माण होगा।

संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा प्रकाषित '' दी ह्यूमन डवलपमेन्ट रिपोर्ट'' में भारतीय महिलाओं की स्थिति के बारे में आषावादी भविष्यवाणियॉ की गई हैं और इस स्थिति में सुधार बताया है, इसके अलावा '' दी यू.एन. फण्ड फॉर डवलपमेन्ट रिपोर्ट'' के अनुसार भारतीय महिलाओं की स्थिति में षिक्षा, नियोजन, प्रति महिला आय दर के क्षेत्र में कुछ सुधार हुआ है। इसके अलावा मानवाधिकार के बेहतर संरक्षण के लिए राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग के गठन के लिए भारत की संसद ने 1993 में मानवाधिकार संरक्षण अधिनियम पारित किया।

वस्तुतः महिला अधिकारों का प्रष्न जितना कानूनी एवं राजनैतिक है उतना ही सामाजिक परिवेष, सांस्कृतिक परम्पराओं तथा आर्थिक संरचनाओं द्वारा निर्धारित एवं प्रभावित हैं।

महिलाओं की अपनी स्वयं की मनोवृत्तियों में भी परिवर्तन अपेक्षित है यह परिवर्तन षिक्षा एवं आर्थिक स्वायत्तता, चेतना एवं संगठनात्मक प्रयासों द्वारा सम्भव है। अतः विष्व समाज में महिला चेतना व उसके अधिकारों के प्रति जो उत्साह जागा है उसका लाभ सारी विषमताओं व असमानताओं के रहते हुए भी भारतीय महिलाओं को क्रमिक रूप से शनैःषनैः मिल सकता है। महिलाओं को जो अधिकार मिले, साधिकार मिले इसी में उसकी व समाज की प्रसन्नता हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची:–

1. आहुजा, राम (1994) भारत में सामाजिक समस्याएँ, जयपुर, रावत पब्लिकेषन।
2. अंसारी एम. ए. (2003) महिला और मानवाधिकार जयपुर, ज्योति प्रकाषन।
3. डॉ. पूरणमल (2003) मानवाधिकार, सामाजिक न्याय और भारत का संविधान, जयपुर, पोइन्टर पब्लिकेषन्स।
4. डॉ. राजकुमार (2005) नारी के बदलते आयाम, नई दिल्ली, अर्जुन पब्लिषिंग हाउस।
5. जाखड दिलीप (2001) मानवाधिकार, जयपुर, युनिवर्सिटी बुक हाउस प्रा0 लि0।
6. कौषिक आषा (2004)नारी सषक्तिकरण विमर्ष एवं यथार्थ, जयपुर, पॉइन्टर पब्लिषर्स।
7. नाटाणी प्रकाष नारायण (2003) मानवाधिकार और कर्त्तव्य, जयपुर, आविष्कार पब्लिकेषन्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स ।
8. रावत हरिकृष्ण (1998) समाजषास्त्र विष्वकोष, जयपुर, रावत पब्लिकेषन्स।
9. सारस्वत अक्षेन्द्रनाथ (2002) सामाजिक न्याय मानवाधिकार और पुलिस, नई दिल्ली, राधा पब्लिकेषन्स ।
10. शर्मा प्रज्ञा (2011) महिला विकास और सषक्तिकरण, जयपुर, आविष्कार पब्लिषर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स।
11. सिंह राजबाला (2016) मानवाधिकार और महिलाएँ, जयपुर आविष्कार पब्लिकेषन्स।

रेणु शर्मा शोधार्थी एवं डॉ. विजय कुमार सोनी, निर्देशक

अर्थशास्त्र विभाग, श्री जेजेटी विश्वविद्यालय, झुंझुनूं, राजस्थान

म्उंपस . तंरण्तमदर्नीतउं2005/हउंपसण्बवउए डवइण 8233082650